International Journal of Applied Research 2017; 3(1): 365-367

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(1): 365-367
www.allresearchjournal.com
Received: 15-11-2016
Accepted: 22-12-2016

डॉ. दीपक भारद्वाज
सह आचार्य, चित्रकला
राजकीय मीरा कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय उदयपुर, राजस्थान, भारत।

Correspondence
डॉ. दीपक भारद्वाज
सह आचार्य, चित्रकला
राजकीय मीरा कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय उदयपुर, राजस्थान, भारत।

आधुनिक कला व भारतीय परिप्रेक्ष्य

डॉ. दीपक भारद्वाज

सारांश
आधुनिक या समसामयिक शब्द का तात्पर्य रचना या नवनिर्माण करना है, जो मानव की सहज प्रवृति है। इस सहजता के कारण ही मानव ने रूप सौन्दर्य को कला के माध्यम से प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयास किया हैं। आधुनिकता का प्रमुख तत्व सचेतनता है– मानव के इच्छित प्रयासों द्वारा एकांगिता एवं तनाव से उत्पन्न द्वन्द्व का नवीन प्रस्तुतीकरण ही आधुनिकता हैं।

मूल शब्दः भारतीय परिप्रेक्ष्य, कला, एकांगिता एवं तनाव

प्रस्तावना
आधुनिक कला व भारतीय परिप्रेक्ष्यः समय, काल तथा परिस्थितियो के आधार पर प्रत्येक युग की कला अपने समय की आधुनिक कला के रूप में जानी जाती रही है। वर्तमान में प्रचलित कला विद्या आधुनिक मानी गई है। जिसमे प्राचीन कला के सिद्धान्त तथा परम्परा की पकड़ के विपरित स्वतन्त्रता तथा नवीनता की लालसा है। वर्तमान की कला में अभिव्यक्ति प्रमुख है।,
आधुनिक कला का स्वरूप प्रयोगवादी प्रक्रिया के मार्ग पर अग्रसर है। आज का जीवनदर्शन द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद से ग्रस्त है। सौन्दर्य चेतना व्यापक चेतना में लीन होती जा रही है। जीवन का सुन्दर–असुन्दर सब ग्राह्म है। उत्साहित व नवीनता की इच्छा रखने वाले कलाकारों ने परम्पराओं को तोड कर उन्मुक्तता को अपनी कला की कसौटी पर बनाया है।
19वीं सदी यह समय था जब भारत पर ब्रितानी साम्राज्य की हुकूमत थी। चित्रकला के क्षेत्र में भारतीय लघु चित्र परम्परा एवं मुगल शैली को भुला कर पश्चिम और पूर्व के बैमेल संस्करण से उपजी वर्णशंकर 'कम्पनी शैली' को प्रचारित किया जा रहा था।
'कला के क्षेत्रों, स्कूल, कॉलेज तथा अन्य संस्थाओं में लन्दन की ''रॉयल अकादमी ऑफ आर्ट'' की तर्ज पर कला शिक्षा दी जा रही थी। ऐसी स्थिति में भारतीय कला को पक्षधरों, शुभ–चिन्तकों, कलाकारों एवं विचारकों का चिन्तित होना स्वाभाविक था। ऐसे लोगों के समुदाय के द्वारा यह सोचा गया कि कला क्षेत्र में लोप हो रही भारतीय परम्परा एवं संस्कृति को बचाया जाये। उक्त कला आन्दोलन ने पुर्नजागरण की कला या पुनरूत्थान की कला शैली के पाम से मूर्त रूप ग्रहण किया। इसका उद्गम स्थन बंगाल था।''
भारतीय कलाकार भी नवीन कला शैलियों एवं पद्धतियों को सीखने के लिये उत्सुक थे। सन् 1850 के दशक में यूरोपीय शासकों ने इस आवश्यकता का अनुभव किया कि भारतीय कला प्रेमियों व कलाकारों को उचित प्रशिक्षण देना चाहिये। परिणाम स्वरूप यूरोपीय तकनीकों का व्यवस्थित प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से चार महानगरों– चेन्नई (सन् 1850), कोलकात्ता (सन् 1854), मुम्बई (सन् 1857) तथा लाहौर (सन् 1875) में कला विद्यालयों की स्थापना की गई।
कला के क्षेत्र में भारत की नई पहचान का प्रयास किया प्रसिद्ध कला समीक्षक और प्राचार्य कलकत्ता स्कूल ई.बी. हेवेल ने। उन्होंने भारतीय कला परम्परा की श्रेष्ठता को पहचाना और साहस के साथ कहा कि ब्रितानी शैली पर दी जा रही कला शिक्षा भारतीयों की वास्तविक सृजन–प्रतिभा को कदापि विकसित नहीं कर सकती।
''कला के क्षेत्र में अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बसु और जामिनीराय जैसे कलाविदों ने भारतीय परम्परा, देशप्रेम और राष्ट्रीय भावना से प्रेरित कला का सृजन एवं प्रचार–प्रसार करना प्रारम्भ कर दिया था। कलकत्ता इस कला आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र था। अतः बंगाल ही पुर्नजागरण की कला का उद्गम स्थल कहलाया।
इन सभी कलाकारों से पूर्व सक्रिय राजा रवि वर्मा एकमात्र ऐसे भारतीय चित्रकार थे जो पाश्चात्य शैली में भारतीय विषयों तथा रंगों में चित्र–सृजन कर रहे थे। उन्होने अपने शिष्यों, चित्रकार साथियों

तथा कला क्षेत्र के सभी लोगों से आग्रह किया कि वे भारतीय कला परम्परा का अध्ययन करके उसे आत्मसात् करें तथा अपने सृजन में मौलिक भारतीय तत्वों का समावेश करें।

सन् 1907 में कलकत्ता में ''इण्डियन सोसायटी ऑफ ओरियन्टल आर्ट'' की स्थापना की गई। इसी काल में भारत के अन्य क्षेत्रों में भी कुछ चित्रकार सक्रिय थे। इनमें इन्दौर कला महाविद्यालय के– दत्तात्रेय दामोदर देवलालीकर, पंजाब के– एस.जी. ठाकुर सिंह तथा शोभासिंह, गुजरात के– रविशंकर रावल, राजस्थान के– रामगोपाल विजयवर्गीय, उत्तरप्रदेश के– जगन्नाथ अहिवासी, बी.सी. गुई, असम के– भवेशचन्द्र सान्याल, श्रीलंका के– जार्ज कीट, केरल के– के.सी. एस. पणीकर एवं विदेशी चित्रकार– ए. एच. मूलर तथा खेतोस्लाव रोरिक आदि के नाम प्रमुख रूप से रखे जा सकते है। भारतीयता और भारतीय चित्रकला की पुर्नस्थापना में उक्त चित्रकारों का योगदान अविस्मरणीय है।''

समन्वय के इस रूप में बंगाल स्कूल के कलाकारों ने ब्रिटिश तथा जापानी जलरंग पद्धति के मिश्रण से वाश पद्धति का विकास किया। शारदा चरण उकील, अब्दुर्रहमान चुगताई आदि के चित्र वाश पद्धति के अनुपम उदाहरण है। बंगाल स्कूल के कलाकारों ने चित्र में गति, प्रकृति का रूपांकन तथा चित्रों में ऊर्जा और लय के विकास के लिये रेखांकन पर विशेष बल दिया। इन प्रमुख विशेषताओं के कारण 'बंगाल स्कूल' के कला आन्दोलन ने देशव्यापी ख्याति अर्जित की।

बंगाल स्कूल से निकल कर अनेक चित्रकार सम्पूर्ण भारत में स्थापित कला महाविद्यालयों में शैक्षणिक पदों पर पहुचे और कला संचेतना का विकास किया। मुम्बई मे जे.जे. स्कूल ऑफ आर्टस एवं प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप की स्थापना, दिल्ली में शिल्पी चक्र तथा भारत के सभी प्रदेशों में कला महाविद्यालयों, कला संस्थाओं की स्थापना के कारण आधुनिक प्रयोगवादी चित्रकला के प्रति कलाकारों का आकर्षण बढा। पुरातन के प्रति आस्था और भविष्य की नई उत्कां लिये हुए कलाकारों की नई पीढ़ी सक्रिय हुई।जिसने कला के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया।

''आधुनिक दृष्टि से सम्पन्न रचनात्मकता लिये हुए चित्रकारों का जो समूह सन् 1947 के पश्चात् उभरा वह यहाँ की कला को एक नया मोड़ देने वाला सिद्ध हुआ। इनमें फ्रांसिस न्यूटन सूजा, मकबूल फिदरा हुसैन, के.एच. आरा., एच.ए. गाड़े, मूर्तिकार एस.के. नाकरें और एस.एच. रजा के नाम के नाम विशेष रूप से लिये जा सकते है। जिन्होंने सन् 1947 में 'प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप' नामक संस्था का गठन किया।'' इस ग्रुप ने अपने चित्रों तथा मूर्तिशिल्पों की पहली प्रदर्शनी मुम्बई में जुलाई 1949 में आयोजित की।

इस ग्रुप की प्रदर्शनियों के दौरान यह अनुभव किया गया कि भारतीय कला की अवरूद्व रचनात्मकता को अब नई दिशा मिलने लगी थी। धीरे–धीरे ''पेग ग्रुप'' के साथ अनेक समर्थ भारतीय चित्रकार जुड़ते गये। इसमें कृष्ण खन्ना, वी.एस. गायतोन्डे, मोहन सामन्त तथा तैयब मेहता प्रमुख है।

सन् 1942–43 में कलकत्ता के आठ कलाकारों ने मिलकर एक गुप की स्थापना की। इनमें नीरोद मजूमदार, शुभ्रा टैगोर, गोपाल घोष, परितोष सेन, रधिन मोएत्रा, प्राण कृष्णपाल, प्रदोष दासगुप्ता व कमला दास गुप्ता प्रमुख थे। इन्होंने सन् 1944–45 में बरनई में अपनी कृतियों को प्रदर्शित किया। यह ग्रुप लगभग एक दशक सन् 1943 से 1953 तक अखिल भारतीय स्तर पर आंदोलन चलाने में सक्रिय रहा।'' मद्रास के कलाकारों जिन्हें देवी प्रसाद राय चौधरी ने प्रभाववाद प्रयोगों के लिये प्रेरित किया था, इनमें प्रमुख थे के.सी.एस. पणिक्कर। इनकी कला समकालीन होते हुए भी प्रेरणा के स्तर पर भारतीय बनी रही।

पणिक्कर ने सन् 1967 में मद्रास के बाहरी इलाके में कलाकारों के एक गांव ''चौलमण्डल'' की स्थापना की। यहाँ मनोनुकूल तथा उन्मुक्त वातावरण के कारण कला का विकास होने लगा और चित्रकार स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को अपनी कृतियों में अभिव्यक्त करने लगे। इसी प्रकार दिल्ली में भी ''शिल्पी चक्र'' नामक संस्था की स्थापना हुई। इसके सदस्यों में रामकुमार, बी.सी. सान्याल, प्राणनाथ मागो, कंवलकृष्ण, हरकृष्णलाल, धनराज भगत आदि प्रमुख थे।

स्वतन्त्र भारत मे सन् 1954 में ''केन्द्रीय ललित कला अकादमी'' की स्थापना नई दिल्ली में तथा विभिन्न राज्यों में ललित कला अकादमियों एवं कला संस्थाओं की स्थापना, साहित्यिक और सांस्कृतिक पत्र–पत्रिकाओं द्वारा कला स्तम्भों की शुरूआत, केन्द्र व राज्य स्तर पर कलाकारों को पुरस्कारों का वितरण आदि कुछ ऐसे कारण रहे कि स्वतन्त्र भारत के लोगों में कला के प्रति दिलचस्पी बढ़ी''।

आधुनिक भारतीय कला य़द्यपि मात्र आकृतिमूलक नहीं रही है और उसने विषयगत बन्धन से भी मुक्ति प्राप्त की है। सम–सामयिक कृतियों में सशक्त रंग प्रयोग नवीन तूलिका संघात, रूपाकार, मुद्रायें, रेखायें तथा विघटित आकृतियां दिखाई देती है। भारतीय कलाकारों के चित्र अनेक अर्थो में सामाजिक व धार्मिक भी है। सघनता, विद्रूपता, छाया चित्रात्मकता एवं सौन्दर्य को समेट लेने की अपूर्व शक्ति जैसे विशिष्ट तत्व आधुनिक भारतीय चित्रकला में उपस्थित है।

वर्तमान काल में कलाकार अपनी निजी अभिव्यक्ति को अधिक महत्व देता है। उसने स्वयं को कला के निर्धारित मानकों या प्रतिबन्धो से मुक्त कर रखा है। आज की कला सिर्फ दिखाई नहीं देती। इसे प्रदर्शित किया जाता है और दर्शकों की भागीदारी अपेक्षित रहती है। परम्परा में मान्य सभी सौन्दर्यशास्त्रीय तत्व तथा मूल्य आज बदल रहे है।

वर्तमान की कला न तो किसी शैली का परिणाम है न ही किसी विचारधारा का। इसका अभिप्रेरक मूलतः किन्हीं समान सौन्दर्यशास्त्रीय विशेषताओं को अपनाना है। आज के युवा कलाकार ऐसे रूपाकारों को अपना रहे है जो बहुअर्थी हों।

आधुनिक ''राष्ट्रीय कला संग्रहालय'' एकमात्र ऐसी दीर्घा है जो आधुनिक भारतीय कला की महत्वपूर्ण कलाकृतियों के संग्रह तथा रख–रखाव के प्रति समर्पित है। ललित कला अकादमी तथा राज्य कला अकादमियां सरकारी वित्तिय सहायता से संचालित है तथा समकालीन कला के उन्नयन में संलग्न है। महानगरों में प्राईवेट आर्ट गैलेरियों की बढ़ती संख्या का भी समकालीन कला के उन्नयन में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आज एक ऐसी असाधारण समकालीन कला अस्तित्व में है जिसमें कला आंतरिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है।

वर्तमान भारत का सृजन–परिदृश्य तथा कला बाजार विशेषकर बड़े नगरों में केंन्द्रित हो गया है। कलाकृतियाँ अविश्वसनीय रूप से ऊंचे दामों पर बिक रही है। समकालीन कला के बाजार में वरिष्ठ कलाकार (जो बाजार में लोकप्रियता प्राप्त कर चुके है) छाये हुए है। संग्रहकर्ता भी उन्हीं की कलाकृतियों का संग्रह कर रहा है।

देश में प्राईवेट आर्ट गैलेरियों की बढी हुई संख्या का समकालीन भारतीय कला के विकास तथा उनका बाजार बनाने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। दो अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं का योगदान भी उतना ही महत्वपूर्ण रहा है। (i) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध नीलाम घरों द्वारा कला की नीलामी का– जिसमे से पहली नीलामी मुम्बई में क्रिस्टीज द्वारा सम्पन्न हुई तथा दूसरी सन् 1992 में दिल्ली में सोदबीज द्वारा कराई गई थी, (ii) कला के प्रोमोटर्स कम डीलर्स का एक नया वर्ग उभरकर सामने आया है जिसमें ''हारमोनी आर्ट फाउण्डेशन'' जिन्दल व बिडला ग्रुप प्रमुख है।

सभी सृजनात्मक गतिविधियों की तरह यह उचित ही है कि भारत की समकालीन कला भारतीय तथा यूरोपिय कला परम्पराओं के अनेक सूत्रों को साथ लेकर विकसित हुई है। आज हम इस स्तर तक पहुंच चुके है, जब भारतीय कला अपने गरिमापूर्ण संकल्प को उजागर कर सकेगी। भारत की समकालीन कला की यह नियती

है कि यह महान् उपलब्धियों को प्राप्त करें। क्योंकि यहाँ का कलाकार अपने गौरवशाली अतीत को व्यापार स्तर पर पुर्नसृजित करने के लिये प्रयासरत है।

संदर्भ

1. सांखलकर र.वि., आधुनिक चित्रकला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रंन्थ अकादमी, जयपुर 16वां संस्करण, 2009
2. चतुर्वेदी ममता, समकालीन भारतीय कला, राजस्थान हिन्दी ग्रंन्थ अकादमी, जयपुर–2008
3. गोस्वामी प्रेमचन्द, आधुनिक चित्रकला के आधार स्तम्भ, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर प्रथम संस्करण, 1995
4. मागो प्राणनाथ, भारत की समकालीन कला, प्रकाशन नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया, प्रथम संस्करण, 2006